प्रेमचन्द का जीवन संघर्श और साहित्य सृजन : एक अनुषीलन

डॉ.लालचन्द कहार
व्याख्याता (हिन्दी)
राजकीय कला महाविद्यालय कोटा

सारांष

उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द्र का जीवन जीवन पर्यंत संघर्ष"ाील रहा है। लेकिन इस संघर्षपूर्ण जीवन में भी जीवन और समाज के प्रति उनकी धारणा, दायित्व बोध और संवेदे"ाीलता में कहीं भी कमी नहीं आई अपितु इससे उनके जीवन में यथार्थ और कटु यथार्थ के भोक्ता का भाव पैदा हुआ है। प्रेमचन्द्र ने भारत के परतंत्रकालीन परिदृ"य के हर पहलू को जिस संवेदन"ाीलता के साथ देखा और महसूस किया था उसे उसी रूप में अपने साहित्य में अंकित कर दिया है। उनके उपन्यास और कहानियां, उनके निबंध और भाषण अर्थात् जो भी उनकी सृजनात्मक चेतना के सृजित अं"ा हैं। वे न केवल प्रेमचन्द्र के जीवन संघर्ष द"ार्ाता है अपितु उसमें परतंत्रकालीन संघर्ष"ाील भारत की आत्मा दिखाई देती है।

कुंजी शब्द – साहित्य सृजन, जीवन यात्रा, साहित्य चेतना, संघर्ष, यथार्थबोध, युगबोध, संवेदे"ाीलता।

भूमिका :

प्रेमचन्द्र वि"ववविख्यात साहित्यकार है। जो साहित्यकार अपने लेखन के माध्यम से दे"ा की सीमाओं को लांघकर वै"िवक क्षितिज में अपना प्रभाव छोड़ते हैं। उनका जीवन, जीवन संघर्ष, सृजन के सभी आयाम सभी को आकर्षित करते है। प्रेमचन्द्र ने भारत के परतंत्रकालीन परिदृ"य के हर पहलू को जिस संवेदन"ाीलता के साथ देखा और महसूस किया था उसे उसी रूप में अपने साहित्य में अंकित कर दिया है। उनके साहित्य में उनका युग बोध प्रखरता के साथ प्रकट हुआ है।

जीवन संघर्श और सृजन यात्रा :

कलम के मजदूर, उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द का जन्म साहित्य केन्द्र बनारस से चार किलोमिटर दूर 'लहमी' नामक गांव में 31 जुलाई 1880 ई. में हुआ। ''उनका कुल फटेहाल कायस्थों का कुल था, जिनके पास करीब छह बीघा जमीन थी और जिनका परिवार बड़ा था। प्रेमचन्द के पितामह गुरू सहाय लाल पटवारी थे। उनके पिता, मुं"ाी अजायब लाल डाक मुं"ाी थे जिनका वेतन लगभग 25 रू. मासिक था। उनकी माता आनन्दी देवी सुन्दर सु"ाील और सुघड़ महिला थी।''[1] उनका बचपन का नाम धनपत राय था।

प्रेमचन्द का लालन पालन निर्धनता और अन्याय के विरूद्ध संघर्ष की पाठ"ाला में हुआ। 1885 में धनपतराय को लालगंज गांव के एक मौलवी साहब के मदरसे में दाखिला दिलाया गया । जहाँ फारसी और उर्दू का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। 1885 में पिता अजायब लाल के तबादले पर धनपतराय ने पिता के साथ आजमगढ़, जमनियां, फैजाबाद, लखनऊ और गोरखपुर आदि स्थानों पर जाने का अवसर मिला। इसी समय 1888 में छह महिने की बीमारी के बाद संग्रहणी से माता आनन्दी देवी की मृत्यु हो गयी, पिता ने दूसरा विवाह कर लिया। बालक धनपतराय के जीवन में ये दोनों घटनाएं किसी वज्रपात से कम नही थी। इससे उनके जीवन दूसरा वह अध्याय शुरू हुआ जिसमें अभाव ही अभाव थे। एक तरफ जीवन के प्रभात में ही माँ के प्यार से वंचित हो गये, दूसरी तरफ विमाता का कठोर व्यवहार। अमृतराय के निर्दे"ान में सम्पादित कर्मभूमि के आमुख में लिखा है ''सात साल के नवाब को अकेला छोड़कर मां चल बसी और उसी दिन वह नवाब जिसे माँ पान के पत्ते की तरह फेरती रहती

थी ...अब उसके सर पर तपता हुआ नीला आका"ा था, नीचे जलती हुई भूरी धरती थी, पैरों में जूते न थे और न बदन पर साबित कपड़े, इस लिए नहीं की यकबयक पैसे का टोटा पड़ गया था, बल्कि इस लिए कि इन सब पर नजर रखने वाली मां की आंखें मूंद गयी थीं।'' प्रेमचन्द ने मां के प्यार के अभाव का कई प्रसंगों एवं पात्रों के माध्यम जिक्र किया है। ''जिन्दगी की वह उम्र, जब इंसान को मुहब्बत की सबसे ज्यादा जरूरत होती है, बचपन है। उस वक्त पौधे को तरी मिल जाय, तो जिन्दगी भर के लिए उसकी जड़ें मजबूत हो जाती हैं। उस वक्त खूराक न पाकर उसकी जिन्दगी खुष्क हो जाती है। मेरी मां का उसी जमाने में देहान्त हुआ और तब से मेरी रूह को खूराक नहीं मिली। वही भूख मेरी जिंदगी है।''[2] प्रेमचन्द को अपने पिता के तबादलों के साथ खनाबदोस रहना पड़ा। 1892 में पिता का गोरखपुर में तबादला हुआ और धनपतराय को मि"ान स्कूल में दाखिला दिलाया गया।

1895 में धनपत राय वापस लहमी आ गये और क्विंस कॉलेज, वाराणसी में नवें दर्जे में प्रवे"ा लिया। पिता 5 रू. प्रतिमाह खर्च भेजते थे। प्रेमचन्द का पहला विवाह पूर्णतः असफल रहा। पारिवारिक कलह से पहली पत्नी मैके जाने के बाद वह वपस नही आई। प्रेमचन्द ने दूसरा विवाह बाल विधवा ि"ावरानी देवी से किया। यह विवाह प्रेमचन्द के लिए सुखद रहा। 1897 में पिता अजायबलाल की मृत्यु हो गई। वे अपने पीछे पत्नी और दो पुत्र छोड़ गये। धनपत राय पर अब परिवार, घर–गृहस्थी का बोझ आ पड़ा था। इस दायित्व का निर्वाह करने लिए प्रेमचन्द पढ़ाई के साथ–साथ ट्य"ान करने लगे। यह समय प्रेमचन्द के लिए कठोर संघर्ष का काल था। स्वयं प्रेमचन्द ने लिखा है कि मेरे पांवों में लोह की नही, अष्ट धातु की बेड़ियाँ थी और चढ़ना चाहता था, पहाड़ पर।''(आत्मकथा) 1889 में एक दिन भूख से पीड़ित होकर वे गणित की एक किताब को दुकान पर बेचने गये जहाँ प्राइमरी स्कूल के अध्यापक से उनकी मूलाकात हुई तथा उनके सहयोग से 18 रू. मासिक के हिसाब से चुनारगढ़ के मि"ान स्कूल में नौकरी शुरू की। 2 जुलाई 1900 को बहराइच के जिला स्कूल में पाँचवे अध्यापक नियुक्त हुए, इसके बाद 21 सितम्बर को जिला बार्ड के स्कूल में नियुक्त, स्थानांतरित हुए। 6 जुलाई 1902 को इलाहबाद के गवर्नमेंट ट्रेनिंग स्कूल में भर्ती हुए। 1903 में कालेज में पढ़ते समय नवाबराय के नाम से लिखना शुरू किया (यह नाम उनके चाचा का दिया हुआ है) । इससे पूर्व 1901 में प्रेमचन्द ने धनपतराय नाम से उर्दू में पहला उपन्यास 'हमखुरमा व हमसवाब' लिखा। 1904 में कानपुर से प्रकाि"ात होने वाले उर्दू मासिक 'जमाना' के सम्पादक मुं"ाी दयानारायण निगम के सम्पर्क में आये। प्रेमचन्द के ये धनिष्ठ मित्र थे। प्रेमचन्द ट्रनिंग कॉलेज से जूनियर सर्टीफिकेट (जे.सी.) टीचर की सनद प्राप्त कर ट्रनिंग कॉलेज के मण्डल स्कूल के हेडमास्टर नियुक्त हुए। 1907 में 'जमाना' में पहली कहानी 'संसार का अनमोल रत्न' प्रकाि"ात हुई । यह कहानी प्रेमचन्द के अन्दर जाग्रत दे"ा सेवा एवं बलिदान की भावना से ओत–प्रौत है।

1908 में जिला हमीरपुर के महोबा में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सब इंसपेक्टर के पद पर नियुक्ति हुई तथा इसी वर्ष उर्दू कहानी संग्रह 'सोजे वतन' का प्रका"ान लेखक नवाबराय के नाम से हुआ। पर सरकार ने असली नाम का पता लगा लिया और जिलाधी"ा ने बुलाकर कहा–''तुम्हारी कहानियों में सिडी"ान भरा हुआ है...तुम्हारी कहानियाँ एकांगी है। तुमने अंग्रेजी सरकार की तौहीन की है।''[3] इस प्रकार इन कहानियों को राजद्रोह की कहानियाँ मानकर, प्रेमचन्द को धमका कर, सभी प्रतियाँ जमा करा ली गयी और ओगे से सरकार की अनुमति के बिना कुछ भी न लिखने की धमकी दी गई। इसके बाद नवाबराय ने दयानारायण निगम के दिये नाम 'प्रेमचन्द' से लिखना प्रारंभ किया।

जमाना के दिसंबर 1910 के अंक में 'बड़े घर की बेटी' में पहली बार लेखक के नाम प्रेमचन्द दिया गया, जो आगे चलकर प्रसिद्ध हुआ। 1910 में श्री प्यारे लाल शाकिर के 'अदिब' (मासिक) में लिखना प्रारम्भ किया। 1911 में ि"ावरानी देवी से एक पुत्री का जन्म हुआ जिसका नाम कमला रखा गया। 1912 में दयानारायण निगम द्वारा प्रकाि"ात 'आजाद' के लिए लिखना शुरू किया। 11 जुलाई 1914 को बस्ती में स्कूलों के सव इंसपेक्टर पद का कार्यभार ग्रहण किया। इसमें दूर–दूर तक का दौरा करना पड़ता था। इस भाग–दौड़ के समय पेचि"ा

से पीड़ित रहे। छह महीने की छुट्टी पर लखनऊ के मेडिकल कॉलेज में इलाज करवाया। 12 मई 1915 को सब डिप्टि इंसपेक्टर के पद को दौरों की असमर्थता के कारण छोड़ दिया और गवर्नमेंट स्कूल में सहायक अध्यापक के पद पर नियुक्त हुए। 'पंचपरमे"वर' कहानी लिखी। 1916 में इलाहबाद वि"वविद्यालय से इतिहास, अंग्रेजी, फारसी और तर्क"ाास्त्र में इन्टर मीडिएट परीक्षा पास की। 19 अगस्त 1916 को गोरखपुर के सरकारी स्कूल में सहायक अध्यापक का काम सम्हाला तथा इसी वर्ष पुत्र रत्न की प्राप्ती हुई । 1917 में 'सप्त सरोज' कहानी संग्रह का प्रका"ान हुआ। 1918 में प्रेमचन्द का युगांतकारी उपन्यास 'सेवासदन' का प्रका"ान हुआ। '1919 में इलाहबाद वि"वविद्यालय से द्वितीय श्रेणी में बी. ए. किया।'(प्रेमचन्दः मदन गोपाल पृ.106) 8 फरवरी 1921 को गजी मियां के मैदान में महात्मा गांधी का भाषण सुना। जिससे प्रभावित होकर 16 फरवरी को सरकारी नौकरी छोड़ दी तथा गांधी जी के असहयोग आंदोलन में शामिल हो गये। गोरखपुर में चरखा प्रचार का काम हाथ में लिया और इलाज के लिए मानिरा गांव में रहने लगे। फिर लमही वापस आए, पर गांव का जीवन रुचा नहीं, जुलाई में मारवाड़ी विद्यालय कानपुर में प्रधानाध्यापक के पद पर काम करने लगे। बाद में यहां से त्याग पत्र देकर लहमी के लिए वापस लौट गये । 1924 ई. में प्रेमचन्द का प्रसिद्ध उपन्यास 'रंगभूमि' प्रकाि"ात हुआ। जब सम्पूर्णानन्द जेल में (दिसंबर 1921 से जुलाई1922 तक) गये तब प्रेमचन्द ने 'मर्यादा' का कार्य सम्हाला। 1923 में प्रेमचन्द का 'संग्राम' नाटक प्रकाि"ात हुआ। प्रेमचन्द ने इसी समय दुलारे लाल भार्गव की गंगा पुस्तक माला में काम किया। 1929 में सरस्वती प्रेस वाराणसी से प्रतिज्ञा का प्रका"ान हुआ। मार्च 1930 में प्रेमचन्द ने 'हंस' प्रकाि"ात की। गांधी जी की सुप्रसिद्ध डांडी–यात्रा शुरू होने से एक पखवारे पूर्व ही इसका प्रका"ान हुआ। हंस में राजनीतिक संपादकीय रहते थे। स्पष्ट ही यह कठिनाइयों को निमंत्रण था। प्रेमचन्द ने दयानारायण निगम को लिखा–''मैं फागुन यानी नए साल से एक हिन्दी रिसाला 'हंस' निकालने जा रहा हूँ। 64 सुफहात का होगा और ज्यादातर अफ़सानों से ताल्लुक रखेगा। है तो हिमाकत ही, दर्दे सर बहुत और नफा कुछ नहीं। लेकिन हिमाकत करने को जी चाहता है। जिन्दगी हिमाकतों से गुजर गई, एक और सही।''[4] यह था प्रेमचन्द का दे"ा भक्ति के प्रति लगाव – जुनुन के स्तर तक। जून में 'हंस' के लिए 1000रु. की जमानत मांगी गई । 1930 में नवल कि"ाोर प्रेस और माधुरी के मालिक श्रीबि"ान नारायण भार्गव की मृत्यु के बाद प्रेमचन्द ने 'माधुरी' का सम्पादन विभाग छोड़कर किया नवल कि"ाोर प्रेस का प्रका"ान विभाग सम्हाला। 1932 में प्रेमचन्द वाराणसी वापस आये तथा किराये के मकान में रहने लगे। 1932 में ही प्रेमचन्द ने विनोद शंकर व्यास द्वारा प्रकाि"ात जागरण का काम हाथ में लिया। उस समय के कानूनी ि"ाकंजों, जमानतों के चलते 'हंस' और 'जागरण' दोनों से सरस्वती प्रेस घाटे में चलने लगा। लेकिन प्रेमचन्द अपने पत्रों को पुत्रवत् समझते थे और इसके लिए आर्थिक तंगी भुगतते थे। पर उन्हें चालू रखना चाहते थे। 1934 में ही प्रेमचन्द अजंता सिनेटोन फिल्म कम्पनी, बंबई के आमंत्रण पर बंबई चले गये। पर वहां स्वाभिमान के अनुकूल वातावरण न मिलने कारण फिल्म जगत् प्रेमचन्द को अच्छा नहीं लगा, फिल्म कम्पनी की हालत भी बिगड़ गई, प्रेमचन्द बंबई से वापस आ गये। और गोदान को पूरा करने में जुट गये। जिसका प्रका"ान 1936 में हुआ। यह प्रेमचन्द की साहित्यक यात्रा का उत्तुंग हिम ि"ाखर है। सितंबर 1936 में हंस में प्रेमचन्द का प्रसिद्ध लेख 'महाजनी सभ्यता' छपा । ''इस लेख को हम प्रेमचन्द का अंतिम साहित्यिक वसीयत नामा कह सकते हैं।''[5] प्रेमचन्द के जीवन का अंतिम वर्ष 1936 कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है– गोदान का प्रका"ान, हंस का मुद्रण एवं प्रका"ान दिल्ली से करने का निर्णय, प्रगति"ाील लेखक संघ के सभापतित्व पद से भाषण, अप्रैल में लाहौर आगमन तथा पंजाब लिटरेरी में साहित्यकार और सौन्दर्य बोध पर भाषण, आज कार्यालय में गोर्की की मृत्यु पर आयोजित सभा में अंतिम भाषण, मंगल सूत्र का लेखन आरंभ, हंस से जमानत की मांग।

प्रेमचन्द का स्वस्थ्य निरंतर कमजोर होता जा रहा था। ''16 जून 36 को उन्हें कई बार उल्टी की और खून के दस्त हुए, पेट के आस पास सख्त दर्द की ि"ाकायत कर रहे थे। इस बीमारी से प्रेमचन्द उठ न सके''[6] 19 जून को 'आज' कार्यालय में गोर्की की मृत्यु पर आयोजित शोक सभा में भाषण तैयार होते हुए भी स्वयं पढ़ न सके। 7 अक्टुबर 1936 की रात्री प्रेमचन्द के जीवन की ही नहीं हिन्दी साहित्य संसार के लिए काल रात्री थी।

प्रेमचन्द का स्वस्थ्य अत्यधिक खराब हो चुका था और 8 अक्टुबर 1936 सुबह साढे सात बजे, प्रेमचन्द अंतिम निद्रा में लीन हो गये।

कृतित्व :

प्रेमचन्द का जीवन अभाव, आर्थिक तंगी, संर्घष और साधाना का पर्याय रहा है। जीवन में कितनी ही विपरित परिस्थितियाँ आयी हो, पर प्रेमचन्द ने लेखन और संपादन को कभी विराम नही दिया। मात्र 56 वर्ष के जीवन काल में वे कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में युग प्रवर्तक और साहित्य 'सम्राट' बन गये। 1905 से लेकर 1936 तक प्रेमचन्द द्वारा सृजित साहित्य का विवरण इस प्रकार है–

कहानीः– सप्त सरोज, अग्नि समाधि, नवनिधि, प्रेरणा, प्रेम पचीसी, प्रेम पूर्णिमा, प्रेम प्रसून, प्रेमतीर्थ, प्रेम प्रतिमा, प्रेम प्रमोद, प्रेम द्वाद"ाी, प्रेम पंचमी, प्रेमचतुर्थी, पाँच फूल, कफन, समर यात्रा, मानसरोवर (आठ भाग) गुप्तधन (दो खण्ड) ।

कहानी संग्रहः– प्रेम पचीसी, प्रेम बतीसी, प्रेम चालीसा, सोजे वतन, फिरदोस खयाल, जादे राह, दुख की कीमत, वारदात, आखिरी तोहफा, ख्वाबो खयाल, खाके परवान।

उपन्यासः– प्रतिज्ञा, वरदान, सेवासदन, प्रेमाश्रम, निर्मला, रंगभूमि, कायाकल्प, गबन, कर्मभूमि, गोदान, मंगल सूत्र (अपूर्ण)

नाटक– कर्बला, रूहानी शादी, संग्राम, प्रेम की वेदी ।

निबंध– कुछ विचार (दो भाग), कमल, तेग और तलवार, विविध प्रसंग (तीन खण्डों में)

जीवनियाँ :– महात्मा शेख"ादी, दुर्गादास ।

बाल साहित्य– कुत्ते की कहानी, जंगल की कहानी, रामचर्च, मनमोदक।

अनुवाद– टालस्टाय की कहानियाँ, सुखदास (जार्ज इलियट के साईलस 'मैरीनर'का अनुवाद) अहंकार (अनातोले फ्रांस के 'थाया' का अनुवाद), चाँदी की डिबिया (गाल्सवर्दी के 'सिल्वर बक्स' का अनुवाद), न्याय (गाल्सवर्दी के जस्टिस का अनुवाद), हड़ताल (गाल्सवर्दी के स्ट्राइक का अनुवाद), आजाद कथा (रतननाथ सरषार के 'फिषाना ए आजाद' का अनुवाद)

पत्र साहित्यः–चिट्ठी–पत्री (दो खण्ड़ों में)।

निश्कर्श – उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द्र का जीवन जीवन पर्यंत संघर्ष"ाील रहा है। लेकिन इस संघर्षपूर्ण जीवन में भी जीवन और समाज के प्रति उनकी धारणा, दायित्व बोध और संवेदे"ाीलता में कहीं भी कमी नहीं आई अपितु इससे उनके जीवन में यथार्थ और कटु यथार्थ के भोक्ता का भाव पैदा हुआ है। उनका सृजन कर्म उनकी जीवन दृष्टि की व्यापकता को द"ार्ता है।

सदर्भ सूची :

1. भारतीय साहित्य निर्माताः प्रेमचन्द– प्रकाषचन्द गुप्त पृ.3
2. कर्मभूमिः आमुख
3. भारतीय साहित्य निर्माता : प्रेमचन्द – प्रकाषचन्द गुप्त पृ. 21
4. वही पृ. 44
5. वही पृ. 44
6. वही पृ. 50